

## संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा का बदलता प्रारूप

डॉ० विपिन कुमार शुक्ल\*

### शोध सार

शीत युद्ध की समाप्ति अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक अत्यंत महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है जिसका अंतर्राष्ट्रीय संबंधों और अंतर्राष्ट्रीय संगठन के क्षेत्र में बहुआयामी प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। बर्लिन की दीवार का गिरना, सोवियत संघ का विघटन, आर्थिक उदारीकरण और भूमंडलीकरण की प्रक्रियाओं ने समेकित रूप से जिस ढंग से अंतर्राष्ट्रीय संगठन और संबंधों को प्रभावित किया उसके परिणाम स्वरूप अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अध्ययन एवं शोध के कई नवीन क्षेत्रों का उभार हुआ। शीत युद्ध की समाप्ति का स्पष्ट प्रभाव संयुक्त राष्ट्र की अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की स्थापना में भूमिका और उसकी क्षमता पर भी पड़ा।

प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत शीत युद्ध के बाद के दौर में संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा में आए परिवर्तनों के अध्ययन पर जोर दिया गया है। संयुक्त राष्ट्र शांति परीक्षा अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा बनाए रखने का एक महत्वपूर्ण उपागम है जिसके माध्यम से संयुक्त राष्ट्र ने शीत युद्ध के दौरान, विशेष तौर पर उन अवसरों पर जब महाशक्तियों की पारस्परिक प्रतिद्वंद्विता के चलते संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद शक्ति हीन एवं क्रिया हीन हो गई थी, इस उपागम के माध्यम से अंतरराष्ट्रीय राजनीति में युद्ध को सीमित करने का प्रयास किया। शीत युद्ध उत्तर काल में जब अंतरा-राज्यीय विवाद और संघर्ष अत्यधिक तीव्र गति से उभरे, ऐसी स्थिति में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा अंतरा-राज्य विवादों में हस्तक्षेप के एक विश्वस्त विकल्प के रूप में शांति परिरक्षा उपागम का बहुतायत का प्रयोग किया गया। अंतरा-राज्यीय विवादों एवं संघर्षों में के इस दौर में शांति परिरक्षा के परंपरागत स्वरूप में व्यापक परिवर्तन अपघटित हुए। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य शीतकाल की समाप्ति के बाद संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा में हुए गुणात्मक एवं परिमाणात्मक परिवर्तनों का अध्ययन करना है।

**शब्दकुंजी:** शांति परिरक्षा, अंतरा-राज्यीय समस्याएं, नृजातीय संघर्ष, मानवीय संकट, असफल राष्ट्र, अंतरराष्ट्रीय हस्तक्षेप, परिमाणात्मक एवं गुणात्मक परिवर्तन आदि।

\*वरिष्ठ प्रवक्ता, राजनीति विज्ञान, राज0 महा0 तिलहर, शाहजहांपुर।

E-mail Id: faagovtpgcollege@yahoo.in

## भूमिका

संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की स्थापना की दिशा में संयुक्त राष्ट्र की एक महत्वपूर्ण 'सृजनात्मक खोज' है जिसने शीत युद्ध के दौर में भी संयुक्त राष्ट्र की अंतर्राष्ट्रीय विवादों के समाधान में भूमिका को प्रासंगिक बनाए रखा।

शांति परिरक्षा का आशय संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में विभिन्न देशों की सैनिक एवं असैनिक टुकड़ियों की स्थानीय विवादों और संकटों के क्षेत्र में तैनाती से है जहां इनका मुख्य कार्य उक्त विवादों एवं संकटों का निष्पक्ष निवारण, समावेशन, विमंदन और समाप्ति होता है।

संयुक्त राष्ट्र चार्टर में कहीं भी शांति परिरक्षा शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है। यह संयुक्त राष्ट्र की एक 'सृजनात्मक खोज' है। जब शीत युद्ध के दौरान महाशक्तियों के मध्य मतभेद के चलते संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद अपने मौलिक कर्तव्य—अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की स्थापना को पूर्ण करने में स्वयं को अक्षम पा रही थी, ऐसी स्थिति में शांति परिरक्षा का विचार सामूहिक सुरक्षा के एक विकल्प के रूप में खोजा गया। सैद्धांतिक तौर पर संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा के विचार का उदय संयुक्त राष्ट्र के द्वितीय महासचिव दाग हैमर शोल्ड के 'निरोधात्मक राजनय' सम्बन्धी विचार से हुआ है। निरोधात्मक राजनय का अभिप्राय संयुक्त राष्ट्र के असंलग्न राज्यों के माध्यम से युद्ध का स्थानीयकरण करना होता है। संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा की व्यवस्थित शुरुआत 1956 में स्वेज नहर संकट के दौरान संयुक्त राष्ट्र तैनात किए गए 'यूनाइटेड नेशन इमरजेंसी फोर्स' के माध्यम से हुई।

संयुक्त राष्ट्र शांति परीक्षा की प्रकृति तदर्थ होती है। संयुक्त राष्ट्र चार्टर में इस बात का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं है कि संयुक्त

राष्ट्र पररिरक्षा दलों की नियुक्ति किस प्रकार की जाएगी। यद्यपि व्यवहार में संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद और महासभा दोनों द्वारा समय-समय पर संयुक्त राष्ट्र की रक्षा दलों की नियुक्ति की गई परंतु मुख्यतः इनकी नियुक्ति हेतु संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के द्वारा ही की गई क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने की मुख्य जिम्मेदारी संयुक्त राष्ट्र के इसी अंग की है।

## परंपरागत संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा

शीत युद्ध काल में संयुक्त राष्ट्र परिरक्षा सामूहिक सुरक्षा के एक विकल्प के रूप में अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को स्थापित करने का साधन बना। इसका मुख्य उद्देश्य विवाद और संघर्ष का स्थानीयकरण करते हुए उसे शीत युद्ध का आयाम ग्रहण करने से बचाना था। ब्रायन वुर्कहार्ट इसकी तुलना अस्पताल के उस नर्सिंग स्टाफ से करते हैं "जिसका मुख्य कार्य रोगी के तापमान नियंत्रित करते हुए उसके स्वास्थ्य को ठीक-ठाक रखना होता है और फिर यदि आवश्यकता पड़े तो कोई बड़ा सर्जन आकर उस समस्या का स्थाई हल प्राप्त कर सके।"

शीत युद्ध काल में शांति परिरक्षा का मुख्य कार्य—शांति की निगरानी और शांति परिरक्षण था। शांति की निगरानी का आशय यह है कि समस्या ग्रस्त क्षेत्र में जब विवादित पक्षों के मध्य एक बार संघर्ष विराम का समझौता हो जाता है तो उस क्षेत्र में तैनात किए जाने वाला शांति परिरक्षा दल मुख्य रूप से संघर्ष विराम की निगरानी करते हुए स्थानीय घटनाओं से सम्बन्धित सूचना एकत्र कर समय-समय पर संयुक्त राष्ट्र महासचिव को प्रेषित करता है ताकि जो अस्थाई शांति स्थापित हुई है

उसको बनाए रखते हुए समस्या के दीर्घकालिक हल खोजे जा सकें।

शांति परिरक्षण का आशय शांति सेना द्वारा केवल समस्या ग्रस्त क्षेत्र से सूचना को एकत्र कर संयुक्त राष्ट्र महासचिव को भेजना ही नहीं होता बल्कि जो शांति समझौता हुआ है उसे सक्रिय सहयोग के माध्यम से बनाए रखने की जिम्मेदारी भी शांति परिरक्षा सेना की होती है।

शीत युद्ध काल में शांति परिरक्षण सेनाओं की तैनाती मुख्य रूप से अंतर-राज्यीय विवादों/संघर्षों के संदर्भ में की जाती रही है जहां वे कतिपय आधारभूत सिद्धांतों के आधार पर कार्य करती थीं जो इस प्रकार हैं—विवादित पक्षों की सहमति, निष्पक्षता, हथियारों का न्यूनतम प्रयोग।

### शीत युद्धोत्तर काल में उभरी नवीन प्रवृत्तियां

शीत युद्ध समाप्ति को अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के सदस्य राष्ट्रों ने अन्तर्राष्ट्रीय संगठन और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के संदर्भ में आशा और उम्मीद की एक नवीन किरण के रूप में स्वीकार किया। शीत युद्ध की समाप्ति के पश्चात अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य पर अनेक नवीन प्रवृत्तियां उभरीं जैसे—

#### 1— संयुक्त राष्ट्र का पुनर्जन्म

संयुक्त राष्ट्र के पुनर्जन्म से आशय यह है कि शीत युद्ध काल में जिन बाधाओं के चलते संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद पूर्णतया पंगु हो चुकी थी, शीत युद्धोत्तर काल में वे बाधाएं समाप्त हो चुकी थीं और विवादों और संघर्षों के समाधान में संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के स्थाई सदस्यों के मध्य सहयोगात्मक युग की शुरुआत हो चुकी थी। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के स्थाई सदस्यों के मध्य उपजे इस अपूर्वगामी सहयोग और 'निषेधात्मक शक्ति' के घटते प्रयोग के फलस्वरूप उन संघर्षों के

समाधान का एक नया रास्ता खुला जो पूर्व में शीत युद्ध के चलते अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा के लिए खतरा बन रहे थे।

#### 2— नृजातीय धार्मिक एवं सांस्कृतिक तनावों/ संघर्षों का उभार

शीत युद्धोत्तर दौर में नृजातीय/धार्मिक उन्माद तथा संस्कृति, राष्ट्रीयता और आत्म निर्णय के सिद्धांत पर आधारित विभिन्न विवादास्पद मुद्दों का उभार बड़ी तेजी से हुआ। उल्लेखनीय है कि ये मुद्दे अधिकांशतः राष्ट्रों की सीमाओं के अंतर्गत उठने वाले आंतरिक मुद्दे थे। विद्वानों का मानना है कि इन मुद्दों के तीव्र उभार के पीछे मुख्य कारण यह था कि शीत युद्ध के दौरान महाशक्तियों के प्रभाव के चलते यह मुद्दे दबे रहे लेकिन जैसे ही महाशक्तियों का वरदहरत इन राष्ट्रों के ऊपर से हटा, इन प्रवृत्तियों में एक तीव्र विस्फोट दिखाई पड़ा। इसका दूसरा पक्ष यह भी है, कि शीत युद्ध की समाप्ति के पश्चात महाशक्तियों के सहयोग के हटने के बाद राष्ट्र अपनी बहु-नृजातीय जनसंख्या के हितों और आंतरिक समस्याओं से निपटने में असफल रहे। फलस्वरूप विभिन्न राष्ट्रों के अंदर आत्म-निर्णय के सिद्धांत पर अलग राष्ट्र के निर्माण, स्वायत्तता तथा अधिक अधिकार सत्ता की मांग उठी। जिसका स्पष्ट उदाहरण हमें पूर्व सोवियत संघ और युगोस्लाविया के विखंडन के रूप में दिखाई देता है।

#### 3— भूमंडलीकरण एवं आर्थिक उदारीकरण

90 के दशक में उभरी भूमंडलीकरण और उदारीकरण प्रक्रिया के दौर में भू-राजनीतिक और भू-सामरिक तत्वों के स्थान पर आर्थिक पक्ष को वरीयता मिली जिसके परिणाम स्वरूप बाजार अर्थव्यवस्था का तीव्र विस्तार हुआ। साथ ही साथ जनता में राज्य से मिलने वाले लाभों को लेकर बड़ी उम्मीदें उत्पन्न हुईं लेकिन

सरकारों की इन उम्मीदों को पूरा करने में असमर्थता तथा 'सुशासन' की कमी के चलते राज्य के अंदर विघटनकारी प्रवृत्तियों का उभार दिखाई देता है, फल स्वरूप कई राज्य विखंडन के कगार पर पहुंच गए।

भूमंडलीकरण का एक दुष्प्रभाव यह भी रहा कि राज्य के अंदर आर्थिक गैर-बराबरी निरंतर बढ़ती गई। भूमणलीकरण का संपन्नहीन वर्ग को कोई लाभ नहीं मिला। फल स्वरूप समाज में तनाव और तीव्र हो गया। इसके अतिरिक्त, भूमंडलीकरण के दौर में राष्ट्र-राज्य अवधारणा धीरे-धीरे कमजोर होती गयी और जिन राष्ट्रों को शीत युद्ध के दौरान महा शक्तियों का वरदहस्त प्राप्त था, शीत युद्धोत्तर काल में महाशक्तियों के वरदहस्त हटने से ये राष्ट्र पूरी तरह से असफल हो गए अथवा अपनी समस्याओं का समाधान न कर सके।

#### 4-मानवीय सुरक्षा के प्रति बढ़ती चेतना

शीत युद्धोत्तर काल में सुरक्षा के विचार में भी व्यापक परिवर्तन अपघटित हुए। मानवीय सुरक्षा ने राज्य की सुरक्षा पर प्राथमिकता दर्ज कर ली। यहां मानवीय सुरक्षा का मुख्य सरोकार मानव गरिमा, खुशहाल जीवन तथा संपूर्ण मानव जाति की उत्तरजीविता से है। आज विश्व में प्राकृतिक आपदा, पर्यावरण असंतुलन, आतंकवाद, नृजातीय दंगे, बीमारियां एवं मादक पदार्थों की तस्करी जैसी समस्याएं राज्य की सीमाओं तक सीमित नहीं रह गई और यदि आज विश्व में कहीं भी मानवीय सुरक्षा को खतरा उत्पन्न होता है तो ऐसे में विश्व व्यवस्था के राष्ट्रों को आगे आना ही होगा।

#### शीत युद्धोत्तर कालीन नवीन प्रवृत्तियों का संयुक्त राष्ट्र पर प्रभाव

उपर्युक्त नवीन प्रवृत्तियों का संयुक्त राष्ट्र विशेष तौर पर उसकी अंतरराष्ट्रीय शांति

और सुरक्षा स्थापित करने की क्षमता पर दूरगामी प्रभाव पड़ा। इस दौर में उत्पन्न गृह युद्ध, नृजातीय संघर्ष तथा मानवीय संकट आदि समस्याएं मूल रूप से राज्य विशेष की सीमा के अंतर्गत उत्पन्न समस्याएं थी जिन्होंने संबंधित राष्ट्र के साथ-साथ पड़ोसी राष्ट्रों में भी शरणार्थी समस्या, पर्यावरण असंतुलन एवं आर्थिक असंतुलन आदि समस्याओं को जन्म दिया और जिनके समाधान हेतु अंतरराष्ट्रीय हस्तक्षेप अपरिहार्य हो गया। यद्यपि संयुक्त राष्ट्र चार्टर किसी राष्ट्र के आंतरिक मामले में हस्तक्षेप को स्पष्ट रूप से अस्वीकार करता है, फिर भी संयुक्त राष्ट्र इन अन्तरा-राज्यीय मामलों से स्वयं को अलग नहीं रख सका। इसके पीछे मूलतः दो तथ्य थे-प्रथम मानवीय संवेदना तथा द्वितीय इलेक्ट्रॉनिक मीडिया। इन अन्तरा-राज्यीय समस्याओं से निपटने के लिए के लिए संयुक्त राष्ट्र ने अपनी सबसे सफल और परीक्षित तकनीकी शांति परिरक्षा का प्रयोग किया। इस प्रकार शांति परिरक्षा का विचार जो शीत युद्ध दौर में मुख्य रूप से अन्तर-राज्यीय समस्याओं और संघर्षों को शीत युद्ध के आयाम ग्रहण करने से रोकने के लिए सृजित किया गया था, शीत युद्धोत्तर उत्तर काल में अन्तरा-राज्यीय समस्याओं की तीव्रता को सीमित करने और उनके समाधान का माध्यम बना, और इसके परंपरागत स्वरूप में विविध परिवर्तन परिलक्षित हुए। इस प्रकार शांति परिरक्षा का विचार एक नवीन रूप में हमारे सामने अस्तित्व में आया जिसे 'द्वितीय पीढ़ी की शांति परिरक्षा' के नाम से जाना जाता है।

#### द्वितीय पीढ़ी की शांति परिरक्षा

शीत युद्ध के परिवर्ती दौर में जब संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा को अन्तरा-राज्यीय समस्याओं यथा गृह युद्ध, नृजातीय दंगे, मानवीय संकट आदि समस्याओं से जूझना पड़ा तो उसके परंपरागत स्वरूप में व्यापक

परिवर्तन परिलक्षित हुए। संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा में अपघटित इन परिवर्तनों को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—परिमाणात्मक परिवर्तन एवं गुणात्मक परिवर्तन।

### परिमाणात्मक परिवर्तन

परिमाणात्मक परिवर्तन का आशय शीत युद्ध के बाद के दौर में संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा मिशन की तैनाती में अपघटित तीव्र उछाल से है। आंकड़ों के अनुसार 1948—1988 के मध्य केवल 13 शांति परिरक्षा मिशन शुरू किए गए जबकि अगले 13 शांति परिरक्षा मिशन की तैनाती में केवल अगले 5 वर्ष ही लगे।

राष्ट्र शांति परिरक्षा दलों की तैनाती में तीव्रता का यह दौर कालांतर में भी जारी रहा। यद्यपि 2010 में पहली बार संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा दलों की तैनाती के ग्राफ में कुछ गिरावट दर्ज की गई। परन्तु अब तक कुल 74 शांति परिरक्षा मिशन संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में आयोजित किए जा चुके हैं और वर्तमान में इनमें से 14 शांति परिरक्षा मिशन अभी भी सक्रिय हैं।

शीत युद्ध उत्तर काल में शांति परिरक्षा दलों की तैनाती में आई इस तीव्रता के पीछे मुख्य कारण यह था कि महा शक्तियों के मध्य चली आ रही गुटीय राजनीति समाप्त हो चुकी थी और संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के लिए अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के समाधान हेतु बेहतर वातावरण सृजित हुआ था। साथ ही विवाद या संघर्ष के स्वरूप में भी परिवर्तन हुआ। जहां शीत युद्ध के दौरान विवादों की प्रकृति मूलतः अंतर-राज्यीय थी, वही शीत युद्धोत्तर काल में अधिकांश विवाद अंतरा-राज्यीय प्रकृति के हैं।

परिमाणात्मक परिवर्तन के अतिरिक्त कतिपय अन्य परिवर्तन भी संयुक्त राष्ट्र परिरक्षा दलों

के संदर्भ में दिखाई पड़ते हैं। पूर्व में नियुक्त किए जाने वाले इन दलों का आकार सीमित होता था (1988 में जब संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा को नोबेल पुरस्कार मिला था उस समय चल रहे 7 शांति मिशन में 25 देशों के लगभग 10000 सैनिक कार्यरत थे) जबकि शीत युद्धोत्तर काल में इन दलों के आकार में व्यापक वृद्धि हुई जैसे 1994 में 17 शांति रक्षा मिशन में लगभग 87000 सैनिक शामिल थे। वर्तमान में भी चल रहे 13 शांति परिरक्षा मिशन में 120 देशों के एक लाख से अधिक सैनिक एवं असैनिक बल शामिल हैं।

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद के दौर में संयुक्त राष्ट्र शांति परीक्षा के विचार को भौगोलिक विस्तार भी मिला और उसने एक वैश्विक गतिविधि का स्वरूप धारण किया। 1989 से पूर्व ज्यादातर शांति परिरक्षा दलों की नियुक्ति अधिकांशतः अफ्रीका या मध्य पूर्व में की गई जबकि 1989 के बाद के दौर में एशिया, अमेरिका यूरोप महाद्वीपों में भी शांति रक्षकों की नियुक्ति दिखाई देती है।

### गुणात्मक परिवर्तन

शीत युद्ध के परिवर्ती दौर में शांति परिरक्षा दलों की तैनाती अधिकांशतः उन क्षेत्रों में की गई जहां पर समस्याओं की प्रकृति की थीं। मूलतः अंतरा-राज्यीय प्रकृति की थी। उन्हें ऐसे स्थानों पर काम करना पड़ा जहां राज्य रूपी संस्थाएं विफल हो चुकी थीं, या शक्तिहीन हो चुकी थीं तथा गृह युद्ध और दलीय संघर्ष अत्यंत तेजी से उभरते हुए मानवीय संकट उत्पन्न कर रहे थे।

ऐसी स्थिति में संयुक्त राष्ट्र शांति पर्यवेक्षक दलों को अपनी परंपरागत भूमिका से परे विभिन्न नवीन कार्यों का संपादन करना पड़ा जैसे—प्राकृतिक आपदा और मानवीय संकट की स्थिति में सहायता (बोस्निया, सोमालिया, इराक), चुनाव पर्यवेक्षण एवं

संपन्न कराना (क्रोएशिया), संघर्ष में संलग्न पक्षों का निशस्त्रीकरण (कंबोडिया, सोमालिया, एल साल्वाडोर) नागरिक प्रशासन (कंबोडिया) शरणार्थी पुनर्वास (पूर्व युगोस्लाविया, कंबोडिया, सोमालिया) कानून व्यवस्था (सोमालिया कंबोडिया), सैन्य एवं पुलिस प्रशिक्षण (कंबोडिया, हैती) आदि। उक्त कार्यों के संपादन के अलावा कहीं कहीं संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा दलों को शांति प्रवर्तन भी करना पड़ा क्योंकि परिरक्षा दलों को उन क्षेत्रों में भी तैनात किया गया जहां विवादित पक्षों के मध्य कोई समझौता नहीं था और ऐसे क्षेत्रों में शांति प्रवर्तन दल के रूप में उन्हें विवादित पक्षों के मध्य सहमति और सहयोग के अभाव में कार्य करते हुए शांति बहाली का प्रयास करना था।

उपरोक्त कार्यों के संपादन हेतु संयुक्त राष्ट्र शांति परिरक्षा के संगठन में व्यापक फेरबदल किए गए जैसे परंपरागत शांति परिरक्षा दलों की प्रकृति मूलतः सैन्य थी और इसमें मुख्य रूप से सैनिक शामिल होते थे। वही दूसरी पीढ़ी के शांति परिरक्षा दलों में सैनिक के साथ-साथ पुलिस एवं नागरिक प्रशासन के कार्मिक भी शामिल किए गए।

## द्वितीय पीढ़ी की शांति परिरक्षा के समक्ष चुनौतियां

दूसरी पीढ़ी के शांति परिरक्षा दलों की तैनाती मुख्य रूप से उन क्षेत्रों में की गई जहां राज्य व्यवस्था शक्तिहीन हो चुकी थी। ऐसे में उन्हें उन विरोधी शक्तियों का सामना करना पड़ा जो व्यवस्था को चुनौती प्रस्तुत कर रहे थे। अतः शांति परिरक्षा दलों को अपने परंपरागत सिद्धांत 'विवादित पक्षों की सहमति' के बिना ही उस क्षेत्र में कार्य करना पड़ा और आवश्यकता पड़ने पर विरोधी पक्षों के विरुद्ध हथियारों का भी प्रयोग करना पड़ा और ऐसी स्थिति में

उनकी निष्पक्षता भी कहीं न कहीं प्रश्न चिन्हित होती रही है। कहने का अभिप्राय है कि नए दौर में शांति परिरक्षक दलों को अपने विरसम्मत सिद्धांतों से विचलित होना पड़ा।

उक्त वैचारिक समस्याओं के अतिरिक्त शांति परिरक्षा दलों को अनेक व्यावहारिक कठिनाइयों का भी सामना करना पड़ा। इन समस्याओं में प्रमुख समस्या शांति परिरक्षण हेतु आवश्यक सैनिक एवं गैर सैनिक बलों की उपलब्धता, सैनिक एवं गैर सैनिक बलों को उपलब्ध कराने वाले राष्ट्रों द्वारा एकाएक अपने सैनिकों की वापसी का मुद्दा, परिरक्षा दलों की तैनाती में होने वाली देरी, एकीकृत आदेश प्रणाली का अभाव तथा विभिन्न देशों से आए हुए सैनिक एवं गैर सैनिक बलों के मध्य समन्वय का अभाव आदि। इसके अतिरिक्त इन परिरक्षा बलों का प्रशिक्षण, साजो-सामान तथा वित्त की समस्या भी संयुक्त राष्ट्र के समक्ष उत्पन्न हुई। लेकिन इन सब समस्याओं के बावजूद अंतरराष्ट्रीय समुदाय द्वारा अंतरा-राज्यीय समस्याओं के समाधान में शांति परिरक्षा रूपी साधन का अधिकांशतः आश्रय लिया गया।

## निष्कर्ष

संयुक्त राष्ट्र शांति परीक्षा ने जहां शीत युद्ध के दौर में सामूहिक सुरक्षा के विकल्प के रूप में अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया, वहीं दूसरी ओर शीत युद्ध उत्तर काल में अंतरा-राज्यीय विवादों के समाधान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यही कारण है कि आज भी अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की स्थापना हेतु अंतर्राष्ट्रीय समुदाय संयुक्त राष्ट्र की इस विशेष सृजनात्मक खोज पर सबसे ज्यादा आश्रित है। आवश्यकता इस बात की है कि शांति परिरक्षा के द्वारा नये कलेवर को ग्रहण

किये जाने से जो समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं, उनका समुचित हल निकाला जाये।

आज विश्व में उत्पन्न हो रही प्राकृतिक आपदा, पर्यावरण संकट, आतंकवाद, नृजातीय दंगों, बिमारियों, मादक पदार्थों की तसकरी, शरणार्थी समस्या आदि राज्य की सीमाओं तक सीमित नहीं रह गयी हैं, और यदि विश्व के किसी भी हिस्से में मानवीय संकट को खतरा उत्पन्न होता है तो अंतर्राष्ट्रीय समुदाय इसकी अनदेखी नहीं कर सकता है। इस स्थिति में इन समस्याओं में हस्तक्षेप एवं समाधान एवं शांति परिरक्षा से बेहतर विकल्प अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के पास अद्यतन नहीं है।

### संदर्भ सूची

1. अरुन कुमार बनर्जी: फिफ्टी ईयर्स आफ यून पीसकीपिंग इण्डिया क्वाटर्ली, जून-जुलाई 1997.
2. एलन जेम्स: पीस कीपिंग इन कोल्ड वार एरा, 1995.
3. बाबी घाली: पीस कीपिंग हजाडर्स, वर्ल्ड फोकस, अक्टूबर 1997.
4. बीबी0 घाली: "एजेण्डा फार फीस" यूएन पब्लिकेशन: न्यूयार्क 1992.
5. केपी सक्सेना: 'पीस कीपिंग एट कास रोड्स' वर्ल्ड फोकस, अक्टूबर 1994.
6. के0पी0सक्सेना: दि यूनाइटेड नेशन्स एण्ड कलेक्टिव सिव्यूरिटी, नई दिल्ली, 1974.
7. एम0एस0 राजन: यूनाइटेड नेशंस एट 50 एण्ड वियाण्ड, नई दिल्ली 1996.
8. रमेश ठाकुर: यूनाइटेड नेशन्स पीस कीपिंग-एडहॉक मिशन्स एण्ड परमानेंट इंगेजमेण्ट, एण्ड ए0 स्नाबेल न्यूयार्क 2001.
9. डॉ0 शशि शुक्ला: अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, लखनऊ 2005.
10. शशि थरुर: शूड यू एन पीसकीपिंग "गो बैक टू बेसिक्स?", सरवाइवल, 1995-96.
11. एस0जे0आर0 बिलग्रामी: यूनाइटेड नेशन्स-विद एण्ड विदाउट कोल्ड वार, नई दिल्ली 1996.
12. सतीश कुमार: दि यूनाइटेड नेशन्स एट 50, नई दिल्ली 1997.